श्रीसत्यनारायण-व्रत-कथा-सप्ताध्यायी

भाषाटीका-विभूषिता

(पार्थिवपूजन-सत्यनारायणपूजन-व्रतोद्यापन-आरती सहित)

टीकाकार :

आचार्य पण्डित श्रीदौलतराम गौड वेदाचार्य

प्रकाशक :

रुपेश ठाकुर प्रसाद प्रकाशन

कचौड़ीगली, वाराणसी - २२१००१

फोन : २३९२५४३, २३९२४७१

सन्-२००५ ई.]

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

[मूल्य : २५/-

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:02

श्रीसत्यनारायण-व्रतकथा-सप्ताध्यायी-भाषाटीकासहिता

प्रथमोऽध्यायः

एकदा मुनयः सर्वे सर्वलोकहिते रताः। सुरम्ये नैमिषारण्ये गोष्ठीं चक्रुर्मनोरमाम् ॥१॥
तदन्तरे महातेजा व्यासशिष्या महायशाः। सूतः शिष्यगणैर्युक्तः समायातो हरिं स्मरन् ॥२॥
सूतं चापि समालोक्य सर्वशास्त्रार्थपारगम्। मुनयः सर्वे समुत्तस्थुः शौनकाद्यास्तपोधनाः ॥३॥
सोऽपि तान् सहसा भक्त्या मुनीन्परमवैष्णवान्। ननाम दण्डवद् भूमौ सर्वधर्मविदाम्बरः ॥४॥
वरासने महाबुद्धिः स्वैर्दत्तैर्मुनिसत्तमैः। उवास सदसोर्मध्ये सर्वैः शिष्यगणैर्वृतः ॥५॥
तत्रोपविष्टं तं सूतं शौनको मुनिसत्तमः। बद्धाञ्जलिरिमं वाचं पप्रच्छ विनयान्वितः ॥६॥

एक समय प्राणियों के हित चाहनेवाले समस्त मुनियों ने परम रमणीक नैमिषारण्य क्षेत्र में मन को प्रसन्न करने वाली सभा की॥१॥ उसी समय अति तेजस्वी व्यासजी के शिष्य सूतजी शिष्यगणों के सहित हरि नाम स्मरण करते हुए वहाँ आये॥२॥ समस्त शास्त्रों को जानने वाले श्रीसूतजी को आते देख महातेजस्वी शौनकादि मुनिगण खड़े हो गये॥३॥ सब धर्मों को जानने वालों में श्रेष्ठ सूतजी तथा परम वैष्णव शौनकादि ऋषि परस्पर शीघ्रता से पृथ्वी पर दण्डवत् नमस्कार करके॥४॥ शौनकादि मुनियों के दिये आसन पर सम्पूर्ण शिष्यों सहित अति बुद्धिमान् सूतजी बैठ गये॥५॥ बैठे हुए सूतजी से शौनकादि मुनियों ने नमस्कार कर हाथ जोड़ कर कहा॥६॥

महर्षे वद सर्वज्ञ कलिकाले समागते। केनोपायेन भगवन् हरिभक्तिर्भवेन्नृणाम् ॥७॥
कलौ सर्वे भविष्यन्ति पापकर्मपरायणाः। वेदविद्याविहीनाश्च तेषां श्रेयः कथं भवेत् ॥८॥
कलावन्नगताः प्राणा लोकाः स्वल्पायुषस्तथा। निर्द्धनाश्च भविष्यन्ति नानापीडाप्रपीडिताः ॥९॥
प्रयाससाध्यं सुकृतं शास्त्रेषु प्रथितं द्विज। तस्मात्कोऽपि करिष्यन्ति कलौ न सुकृतं जनाः ॥१०॥
सुकृतेषु विनष्टेषु प्रवृत्ते पापकर्मणि। सर्वेशाः प्रलयं सर्वे गमिष्यन्ति दुराशयाः ॥११॥
स्वल्पश्रमैरल्पवित्तैरल्पकालैश्च सत्तम। यथा भवेन्महत्पुण्यं तथा कथय सूत नः ॥१२॥
यस्योपदेशतः पुण्यं पापं वा कुरुते जनः। स तद्भागी भवेन्मर्त्य इति शास्त्रेषु निर्णयः ॥१३॥
पुण्योपदेशो सदयः कैतवैश्च विवर्जितः। अपापो न विरोधी च चत्वारः केशवोपमाः ॥१४॥

हे महर्षे ! हे सर्वज्ञ सूतजी ! इस कलिकाल में मनुष्यों को हरिभक्ति किस उपाय से हो? हे भगवन् ! वह कहिये, क्योंकि कलिकाल में सब प्राणी पाप करने में तत्पर और वेदविहीन हो जायेंगे। उनका कल्याण किस प्रकार होगा॥७-८॥ इस कलियुग में मनुष्य प्राणों को धारण किये, थोड़ी आयुवाले, निर्धन और अनेक पीड़ा से युक्त होंगे॥९॥ प्रायः पुण्य अति परिश्रम से होता है। इससे कलियुग में कोई मनुष्य पुण्य न करेगा॥१०॥ और सब पुण्य के नष्ट होने से सब पापों में प्रवृत्त हो जायेंगे। तब तुच्छ ज्ञानवाले हो जायेंगे। तब तुच्छ ज्ञानवाले मनुष्य अपने सब वंश सहित नष्ट हो जायेंगे॥११॥ हे सूतजी! किस तरह अल्प परिश्रम से थोड़े धन और कुछ ही समय में पुण्य प्राप्त हो ऐसा कोई उपाय हम लोगों से वर्णन कीजिये॥१२॥ जिसके उपदेश से मनुष्य पुण्य, पाप करता है वह उसका भागी होता है॥१३॥ पुण्य का उपदेश करने वाला, दयावान्, कपट रहित, निष्पाप और निर्विरोधी यह चार तरह के मनुष्य नारायण के समान हैं॥१४॥

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:02

ज्ञानं संप्राप्य संसारे यः परेभ्यो न यच्छति। ज्ञानरूपी हरिस्तस्मै प्रसन्न इव नेक्षते॥१५॥
ज्ञानरत्नैश्च युक्तो यः परसन्तोषकृन्नरः। स तु ज्ञेयः समग्रेण नररूपधरो हरिः॥१६॥
व्रतेन तपसा किं वा प्राप्यते वाञ्छितं फलम्। तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि कथयस्व महामते॥१७॥
त्वमेव मुनिशार्दूल वेदवेदाङ्गपारगः। त्वदृते नहि वक्तान्यो यतस्त्वं व्याससिक्षितः॥१८॥

सूत उवाच

धन्योऽसि त्वं मुनिश्रेष्ठ त्वमेव वैष्णवोऽग्रणः। यतः समस्तलोकानां हितमिच्छसि सर्वदा॥१९॥
शृणु शौनक वक्ष्यामि यत्त्वया श्रोतुमिष्यते। नारदेनैव सम्प्रोक्तः भगवान् कमलापतिः।
सुरर्षये यथैवाह तच्छृणुध्वं समाहिताः॥२०॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां प्रथमोऽध्यायः॥१॥

संसार में ज्ञानी होकर जो दूसरों को ज्ञान नहीं देता उस पर ज्ञानरूपी परमेश्वर प्रसन्न नहीं होते॥१५॥ जो पुरुष रत्नरूपी ज्ञान से दूसरों को सन्तोष देते हैं, उन्हें मनुष्य रूप धारण किये नारायण ही जाने॥१६॥ हे महामते ! ऐसा कौन व्रत है, जिसके करने से मनोवाञ्छित फल प्राप्त हो, वह हम लोगों को सुनने की इच्छा है॥१७॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! आप वेद-वेदांग के ज्ञाता हैं, आप जैसा दूसरा कोई वक्ता नहीं दीखता। क्योंकि श्रीवेदव्यासजी के आप शिष्य हैं॥१८॥

सूतजी बोले–हे मुनिश्रेष्ठ ! तुम धन्य हो, तुम्हीं वैष्णवों में अग्रगण्य हो। कारण कि सब प्राणियों का तुम सदैव हित चाहते हो॥१९॥ हे शौनक ! सुनो, मैं आपसे उस उत्तम व्रत को कहूँगा, जिस व्रत को नारदजी ने लक्ष्मीपति भगवान् से पूछा था और जिस प्रकार भगवान् ने नारदजी से कहा, हे ऋषिगण! उसे सावधान होकर सुनो॥२०॥ *इति प्रथमोऽध्यायः समाप्तः।* *

अथ द्वितीयोऽध्यायः

एकदा नारदो योगी परानुग्रहकाङ्क्षया। पर्यटन् विविधान् लोकान् मर्त्यलोकमुपागतः॥१॥
तत्र दृष्ट्वा जनाः सर्वे नानाक्लेश-समन्विताः। नानायोनिसमुत्पन्नाः क्लिश्यन्ते पापकर्मभिः॥२॥
केनोपायेन चैतेषां दुःखनाशो भवेद् ध्रुवम्। इति सञ्चिन्त्य मनसा विष्णुलोकं गतस्तदा॥३॥
तत्र नारायणं देवं शुक्लवर्णं चतुर्भुजम्। शङ्खचक्रधरं देवं वनमालाविभूषितम्॥४॥
दृष्ट्वा तं देवदेवेशं स्तोतुं समुपचक्रमे॥५॥

नारद उवाच

नमस्ते वाङ्मनोऽतीत - रूपायानन्तशक्तये। आदिमध्यान्तहीनाय निर्गुणाय गुणात्मने॥६॥

एक समय नारदजी समस्त प्राणियों के हित की इच्छा से अनेक लोकों में घूमते हुए मृत्युलोक में आये॥१॥ यहाँ उन्होंने देखा कि सब प्राणी अनेक पीड़ाओं से युक्त और अनेक योनियों में उत्पन्न होकर पापकर्म से दुःख पा रहे हैं॥२॥ यह देख कर विचार किया कि इन लोगों का दुःख किस प्रकार दूर हो? ऐसा मन में विचार कर विष्णु लोक में चले गये॥३॥ वहाँ जिनके शुक्लवर्ण, चार भुजाएँ हैं, जिन्होंने शंख, चक्र को धारण किया है और वनमाला से सुशोभित देवेश नारायण हैं, उनको देख कर स्तुति करने लगे॥४-५॥ **नारदजी बोले**– हे महाराज ! आप वचन और मन से, न कहने, न धारण करने के योग्य अनन्त शक्तियुक्त और निर्गुणात्मक हैं॥६॥

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:02

सर्वेषामादिभूताय भक्तानामार्त्तिनाशिने। श्रुत्वा स्तोत्रं ततो विष्णुर्नारदं प्रत्यभाषत ॥७॥

श्रीभगवानुवाच

किमर्थमागतोऽसित्वं किन्ते मनसि वर्तते। कथयस्व महाभाग तत्सर्वं कथयामि ते ॥८॥

नारद उवाच

मृत्युलोके जनाः सर्वे नानाक्लेशसमन्विताः। नानायोनिसमुत्पन्नाः क्लिश्यन्ते पापकर्मभिः ॥९॥
तत्कथं शमयेन्नाथ लघूपायेन तद्वद। तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि कृपाऽस्ति यदि ते मयि ॥१०॥

श्रीभगवानुवाच

साधु पृष्टं त्वया वत्स लोकानुग्रहकाङ्क्षया। यत्कृत्वा मुच्यते मोहात्तच्छृणुष्व वदामि ते ॥११॥
व्रतमस्ति महत्पुण्यं स्वर्गे मर्त्ये च दुर्लभम्। तव स्नेहान्मया विप्र प्रकाशः क्रियतेऽधुना ॥१२॥

हे महाराज ! आप सब प्राणियों के उत्पन्नकर्ता और भक्तों के दुःख के नाशक हैं। यह स्तुति सुनकर **विष्णु भगवान् बोले**–॥७॥ हे नारद ! तुम किस काम से आये हो? तुम्हारे मन में क्या है? हमसे जो पूछोगे वह हम कहेंगे॥८॥ **नारदजी बोले**–हे नाथ ! मृत्युलोक के सब प्राणी अनेक योनियों में उत्पन्न होकर निज पाप कर्म से क्लेशित हो रहे हैं॥९॥ हे महाराज! जिस छोटे उपाय से उनका क्लेश दूर हो, वह उपाय मैं सुनना चाहता हूँ॥१०॥ **भगवान् बोले**–समस्त जनों पर कृपा कर तुमने बहुत अच्छा प्रश्न पूछा है, जिसके करने से मनुष्य मोह से छूट जाय, मैं ऐसा उपाय कहता हूँ, सुनो॥११॥ हे नारद! जो व्रत तीनों लोकों में अति दुर्लभ है वह आज आपके कहने से प्रकाशित कर रहा हूँ॥१२॥

सत्यनारायणस्यैव व्रतं सम्यग्विधानतः। कृत्वा सद्यः सुखं भुक्त्वा परत्र मोक्षमाप्नुयात् ॥१३॥
तच्छ्रुत्वा भगवद्वाक्यं नारदः पुनरब्रवीत् ॥१४॥

नारद उवाच

किं फलं किं विधानं च कृतं केन च तद् व्रतम्। तत्सर्वं विस्तराद् ब्रूहि कदा कार्यं हि तद् व्रतम् ॥१५॥

श्रीभगवानुवाच

दुःखशोकादिशमनं धनधान्य - विवर्धनम्। सौभाग्यसन्ततिकरं सर्वत्र - विजयप्रदम् ॥१६॥
यस्मिन् कस्मिन्दिने मर्त्यो भक्तिश्रद्धासमन्वितः। सत्यनारायणं देवं यजेच्चैव निशामुखे ॥१७॥
बान्धवैर्ब्राह्मणैश्चैव सहितो धर्मतत्परः। नैवेद्यं भक्तितो दद्यात्सपादं भक्तिसंयुतम् ॥१८॥

वह सत्यनारायण का व्रत है। जिसको विधिपूर्वक करने से इस लोक में सुख और परलोक में मोक्ष मिलता है॥१३॥ यह सुनकर **नारदजी बोले**–इस व्रत का क्या फल है और पूर्व में किसने किया था? किस समय यह व्रत करना चाहिये, आप विस्तार पूर्वक कहिये?॥१४-१५॥

श्रीभगवान् ने कहा कि–इसके करने से दुःख-शोकादि का नाश, धन-धान्य की वृद्धि और सन्तति की प्राप्ति तथा सर्वत्र विजय प्राप्ति होती है॥१६॥ इस व्रत में मनुष्य भक्ति-श्रद्धायुक्त किसी भी दिन सायंकाल में सत्यनारायण की पूजा करे॥१७॥ और भाई-बन्धु तथा ब्राह्मणों के साथ धर्मयुक्त सवा सेर उत्तम नैवेद्य भोग लगावे॥१८॥

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:02

रम्भाफलं घृतं क्षीरं गोधूमस्य च चूर्णकम्। अभावे शालिचूर्णं वा शर्करा च गुडं तथा ॥१९॥
प्रसादं सर्वभक्ष्याणि चैकीकृत्य निवेदयेत्। विप्राय दक्षिणां दत्त्वा कथां श्रुत्वा जनैः सह ॥२०॥
ततश्च बन्धुभिः सार्द्धं विप्राय प्रतिपादयेत्। प्रसादं भक्षयेद् भक्त्या नृत्यगीतादिकं चरेत् ॥२१॥
ततश्च स्वगृहं गच्छेत्सत्यनारायणं स्मरन्। एवं कृते मनुष्याणां वाञ्छासिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ॥२२॥
विशेषतः कलियुगे नान्योपायोऽस्ति भूतले। कथां सम्यक् प्रवक्ष्यामि कृतं येन पुरा मुने ॥२३॥
कश्चित्काशीपुरे रम्ये ह्यासीद्विप्रोऽतिनिर्धनः। क्षुधातृष्णाकुलो भूत्वा नित्यं बभ्राम भूतले ॥२४॥
दुःखितं ब्राह्मणं दृष्ट्वा भगवान्ब्राह्मणप्रियः। वृद्धब्राह्मणरूपेण पप्रच्छ द्विजमादरात् ॥२५॥

केले का फल, घी, दूध और गेहूँ का चूर्ण लावे। गेहूँ का चूर्ण न हो तो चावल का चूर्ण, खाँड़ अथवा गुड़ मिलावे। सवा पाव अथवा सवा सेर के हिसाब से मिलाकर भक्ति से सत्यनारायण भगवान् को नैवेद्य लगावे, बान्धवों के साथ कथा सुनकर ब्राह्मणों को दक्षिणा दे॥१९-२०॥ श्रीसत्यनारायण के प्रसाद को अपने भाई-बन्धुओं के साथ खाकर रात्रि में नृत्य गीतादि करे॥२१॥ तदनन्तर सब श्रोतागण श्रीसत्यनारायण भगवान् का स्मरण करते हुए अपने-अपने घर जायें। इस प्रकार व्रत करने से मनोवांछित फल मिलता है॥२२॥ विशेष कर इस कलिकाल में पृथ्वी पर इससे बढ़ कर दूसरा कोई उपाय नहीं है। हे नारद! जिन्होंने इस व्रत को पहले किया वह कथा सुनो॥२३॥ काशीपुरी में निर्धन शतानन्द नामक एक ब्राह्मण क्षुधा-पिपासा से दुःखित नित्य पृथ्वी पर भिक्षा माँगने हेतु घूमता था॥२४॥ ब्राह्मण-प्रेमी भगवान् नारायण ने दुःखित ब्राह्मण को देखकर बूढ़े ब्राह्मण का रूप धारण कर अति आदर से पूछा॥२५॥

किमर्थं भ्रमसे विप्र ! महीं नित्यं सुदुःखितः। तत् सर्वं श्रोतुमिच्छामि कथ्यतां यदि रोचते ॥२६॥

विप्र उवाच

ब्राह्मणोऽतिदरिद्रोऽहं भिक्षार्थं वै भ्रमे महीम्। उपायं यदि जानासि कृपया कथय प्रभो ॥२७॥

वृद्धब्राह्मण उवाच

सत्यनारायणो देवो वाञ्छितार्थफलप्रदः। तस्य त्वं द्विजशार्दूल कुरुष्व व्रतमुत्तमम् ॥२८॥
यत्कृत्वा सर्वदुःखेभ्यो मुक्तो भवति मानवः। विधानं च व्रतस्यापि विप्रायाभाष्य यत्नतः ॥२९॥
सत्यनारायणो वृद्धस्तत्रैवान्तरधीयत। ततः प्रातः करिष्यामि व्रतं मनसि निश्चितम् ॥३०॥
इति सञ्चिन्त्य विप्रोऽसौ रात्रौ निद्रां न लब्धवान्। ततः प्रातः समुत्थाय सत्यनारायणव्रतम् ॥३१॥

हे विप्र ! किस कारण पृथ्वी पर आप नित्य घूमा करते हैं। यह हमारी सुनने की इच्छा है, यदि आपकी इच्छा हो तो कहिये?॥२६॥ **ब्राह्मण बोला**–मैं अत्यन्त दरिद्र हूँ, भिक्षा के लिए पृथ्वी पर भ्रमण करता हूँ, यदि आप कुछ जानते हों तो कृपा कर पूर्ण रूप से कहिये?॥२७॥ **वृद्ध ब्राह्मण बोले**–हे द्विजश्रेष्ठ ! मनोरथ को सिद्ध करने वाला उत्तमोत्तम श्रीसत्यनारायण का व्रत करो॥२८॥ जिसके करने से मनुष्य सब दुःखों से छूट जाते हैं। वृद्ध ब्राह्मणरूपी श्रीसत्यनारायण देव ने व्रत का विधान ब्राह्मण को बताकर आप अन्तर्धान हो गये। तदनन्तर ब्राह्मण शतानन्द ने मन में निश्चय किया कि मैं कल ही श्रीसत्यनारायण का व्रत करूँगा॥२९-३०॥ इसी चिन्ता में ब्राह्मण को रात भर नींद न आयी, सुबह उठ कर उसने यह निश्चय किया कि, मैं आज श्रीसत्यनारायण का व्रत अवश्य करूँगा॥३१॥

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:02

करिष्ये इति संकल्प्य भिक्षार्थमगमद् द्विजः। तस्मिन्नेव दिने विप्रः प्रचुरं द्रव्यमाप्तवान् ॥३२॥
तेनैव बन्धुभिः सार्धं सत्यस्य व्रतमाचरेत्। सर्वदुःखैर्विनिर्मुक्तः सर्व - सम्पत्समन्वितः ॥३३॥
स बभूव द्विजश्रेष्ठो व्रतस्यास्य प्रभावतः। ततः प्रभृतिकाले च मासि-मासि कृतं व्रतम् ॥३४॥

श्रीभगवानुवाच

एवं नारायणस्येदं व्रतं ज्ञात्वा द्विजोत्तमः। शतानन्दब्राह्मणस्य कुटुम्बैः सह पूजनम् ॥३५॥
सर्वपापविनिर्मुक्तो दुर्लभं मोक्षमाप्नुयात् ॥३६॥
व्रतं चेदं यदा विप्रा पृथिव्यां सञ्चरिष्यति। तदैव सर्वदुःखं च मनुजस्य विनश्यति ॥३७॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां द्वितीयोऽध्यायः॥२॥

यह सङ्कल्प कर भिक्षा माँगने को गया, तो उस दिन उसको सब दिनों से अधिक मिला॥३२॥ उस द्रव्य से उसने अपने भाइयों के साथ श्रीसत्यनारायण का व्रत किया। उसके प्रभाव से सब दुःखों से छूट कर सर्व-सम्पत्ति से युक्त हो गया। व्रत के प्रभाव से शतानन्द नगर भर में श्रेष्ठ माना जाने लगा और तभी से वह ब्राह्मण हर महीने व्रत करने लगा॥३३-३४॥ **भगवान् ने कहा**–शतानन्द द्वारा किया हुआ श्रीसत्यनारायण का यह पूजन है इसको जान कर॥३५॥ जो मनुष्य व्रत करता है वह सब पापों से छूट कर मोक्ष को पा जाता है॥३६॥ इस प्रकार पृथ्वी में इस व्रत को जो मनुष्य करेंगे उनका दुःख अवश्य नष्ट हो जायेगा॥३७॥

इति द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः॥२॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

सूत उवाच

एवं नारायणेनोक्तं नारदाय महात्मने। मया तत्कथितं विप्र किमन्यत्कथयामि ते ॥१॥

शौनक उवाच

ततो विप्राद् व्रतं केन पृथिव्यां चरितं मुने। सत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि श्रद्धास्माकं प्रजायते ॥२॥

सूत उवाच

शृणुध्वं मुनयः सर्वे तस्माद्येन कृतं भुवि। एकदा सः द्विजवरो निजवित्तानुसारतः ॥३॥
बन्धुभिः स्वजनैः सार्द्धं व्रतं कर्तुं समुद्यतः। एतस्मिन्नेव काले तु काष्ठक्रेता समागमत् ॥४॥
बहिः काष्ठञ्च संस्थाप्य विप्रस्य मन्दिरं ययौ। क्षुधया पीडितात्मा च विप्रं दृष्ट्वा तथाविधम् ॥५॥

सूतजी बोले–हे शौनक ! विष्णु भगवान् ने जिस तरह कहा था, वह तुमसे मैंने कहा और दूसरी बात जो हो वह पूछो॥१॥ **शौनकजी बोले**–हे सूतजी ! उस ब्राह्मण के बाद इस व्रत को किसने किया? वह सुनने की इच्छा है॥२॥ **सूतजी बोले**–हे मुनियों ! जिसने व्रत को किया वह सुनिये, एक समय वह द्विज निज धर्मानुसार॥३॥ निज बान्धवों के साथ व्रत करने को उद्वत हुआ, उसी समय एक लकड़हारा वहाँ आया॥४॥ भूख-प्यास से पीड़ित काष्ठ. के भार को बाहर रख, ब्राह्मण के घर में जाकर उसने व्रत करते हुए ब्राह्मण को देखा॥५॥

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03

प्रणिपत्य द्विजं प्राह किमिदं क्रियते त्वया। कृते किं फलमाप्नोति विस्तराद्वद मे प्रभो! ॥६॥

विप्र उवाच

सत्यनारायणस्येदं व्रतं सर्वेप्सितप्रदम्। दुःखशोकादिशमनं सर्वत्र विजयप्रदम् ॥७॥
यस्य प्रसादान्मे सर्वं धनधान्यादिकं महत्। तस्य तद्वचनं श्रुत्वा काष्ठक्रेतातिहर्षितः ॥८॥
पपौ जलं प्रसादं च भुक्त्वा तन्नगरं ययौ। सत्यनारायणं देवं चिन्तयन् स्थिरमानसः ॥९॥
काष्ठं विक्रयतो ग्रामे प्राप्यते चाद्य यद्धनम्। तेनैव सत्यदेवस्य करिष्ये व्रतमुत्तमम् ॥१०॥
इति सञ्चिन्त्य मनसा काष्ठं धृत्वा तु मस्तके। जगाम नगरे रम्ये धनिनां यत्र संस्थितिः ॥११॥
तद्दिने काष्ठमूल्यं च द्विगुणं प्राप्तवानसौ। ततः प्रसन्नहृदयः सुपक्वं कदलीफलम् ॥१२॥

लकड़हारा नम्रता से हाथ जोड़ कर प्रणाम कर बोला–आप यह क्या कर रहे हैं? इसके करने से क्या फल होता है? वह विस्तार पूर्वक कहिये।।६।। **ब्राह्मण बोला**–मनोरथों को देने वाला, दुःख और शोक नाश करने वाला तथा सिद्धि को देने वाला यह श्रीसत्यनारायण का व्रत है।।७।। जिसके प्रसाद से यह धन-धान्यादि प्राप्त हुआ है। यह सुनकर लकड़हारा प्रसन्न हो।।८।। प्रसाद को खाकर और जल पीकर वह भगवान् श्रीसत्यनारायण का ध्यान करता हुआ अपने नगर को चला गया।।९।। आज लकड़ी बेचने से जो द्रव्य प्राप्त होगा उसी से मैं सत्यदेव के उत्तम व्रत को अवश्य करूँगा।।१०।। ऐसा मन में विचार कर उसने लकड़ी को सिर पर रखा, जहाँ धनी लोग रहते थे उस नगर में गया।।११।। उस दिन लकड़हारे को दूना द्रव्य प्राप्त

शर्कराघृतदुग्धं च गोधूमस्य च चूर्णकम्। कृत्वैकत्र सपादं च गृहीत्वा स्वगृहं ययौ ॥१३॥
ततो बन्धून् समाहूय चकार विधिना व्रतम्। तद्व्रतस्य प्रसादेन धनपुत्रान्वितोऽभवत् ॥१४॥
इह लोके सुखं भुक्त्वा चान्ते सत्यपुरं ययौ। अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि शृणुध्वं मुनिसत्तमाः ॥१५॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां तृतीयोऽध्यायः॥३॥

*

हुआ। वह अत्यन्त प्रसन्न हो सुन्दर केले के फल, शक्कर, दूध, घी, गेहूँ का चूर्ण सबको सवाई लेकर, घर में आकर।।१२-१३।। अपने भाई-बन्धुओं को बुला कर विधि से श्रीसत्यनारायण का व्रत किया, उस व्रत के प्रभाव से लकड़हारा धन-पुत्र से युक्त हो गया।।१४।। इस लोक में सुख पाकर अन्त में सत्यलोक को चला गया। हे मुनिगण! मैं और कथा कहता हूँ, उसको सुनिये।।१५।।

इति तृतीयोऽध्यायः समाप्तः॥३॥

*

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03

अथ चतुर्थोऽध्यायः

श्रीसूत उवाच

आसीदुल्कामुखो नाम नृपतिर्बलिनाम्बरः। जितेन्द्रियः सत्यवादी ययौ देवालयं प्रति ॥१॥
दिने दिने धनं दत्त्वा द्विजान्सन्तोषयत्सुधीः। भार्या तस्य प्रमुग्धा च सरोजवदना सती ॥२॥
भद्रशीला नदीतीरे सत्यस्य व्रतमाचरत्। एतस्मिन्नन्तरे तत्र साधुरेकः समागतः ॥३॥
वाणिज्यार्थं बहुधनैः रत्नाद्यैः परिपूरितः। नावं संस्थाप्य तत्तीरे जगाम स तटं प्रति ॥४॥
दृष्ट्वा स व्रतिनं भूपं पप्रच्छ विनयान्वितः ॥५॥

साधुरुवाच

किमिदं कुरुषे राजन्! भक्तियुक्तेन चेतसा। प्रकाशं कुरु तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि साम्प्रतम् ॥६॥

सूतजी ने कहा–राजाओं में श्रेष्ठ उल्कामुख नामक एक जितेन्द्रिय राजा था, वह सदैव देव-मन्दिर जाया करता था।।१।। वह ब्राह्मणों को नित्य धन देकर संतुष्ट किया करता था, उसकी कमल के सदृश मुखवाली प्रमुग्धा पत्नी थी।।२।। वह अपनी स्त्री के साथ भद्रशीला नदी के तट पर श्रीसत्यदेव का व्रत करता था, उसी समय वहाँ एक बनिया आया।।३।। वाणिज्य के लिये बहुत धन से परिपूर्ण नाव को नदी के तीर पर लगा कर आप तट पर उतर गया।।४।। वह राजा को व्रत करता हुआ देख नम्रता से पूछने लगा।।५।। **साधु बोला**–हे राजन् ! आप यह क्या करते हैं, वह हमसे भक्तिपूर्वक कहिये, सुनने की इच्छा है।।६।।

राजोवाच

पूजनं क्रियते साधो! विष्णोरतुलतेजसः। व्रतं च स्वजनैः सार्धं पुत्राद्यावाप्तिकांक्षया ॥७॥
प्रत्युवाच ततो नत्वा राजानं मधुरं वचः। सर्वं कथय मे राजन्! व्रतमेतत्करोम्यहम् ॥८॥
ममापि सन्ततिर्नास्ति एतस्माज्जायते ध्रुवम्। ततो निवृत्य वाणिज्यात्सानन्दो गृहमागतः ॥९॥
भार्यायै कथितं सर्वं व्रतं सन्ततिदायकम्। तदा व्रतं करिष्यामि यदा मे सन्ततिर्भवेत् ॥१०॥
अल्पकाले गते तस्य भार्या लीलावती सती। गर्भयुक्ताऽऽनन्दचित्ताऽभवद् धर्मपरायणा ॥११॥
पूर्णे गर्भे ततो जाता बालिका चातिनिर्मला। दिने-दिने वर्द्धमाना शुक्लपक्षे यथा शशिः ॥१२॥
ततो वणिक् जाया च जातकर्म समाचरेत्। नाम्ना कलावती चेति तन्नामकरणं कृतम् ॥१३॥

राजा बोला–हे साधो ! यह अति तेजस्वी विष्णु भगवान् का पूजन है, जो अपने बान्धवों के साथ पुत्रादि-प्राप्ति की इच्छा से किया जाता है।।७।। **तब बनिया नमस्कार कर बोला**–हे राजन् ! इस व्रत को मुझसे कहिये, यह मैं भी करूँगा।।८।। कारण कि मेरे भी सन्तान नहीं है, इस व्रत से अवश्य होगी। वह व्रत की विधि जान कर अपने घर में आकर अपनी स्त्री से यह सन्तानप्रद व्रत कहा।।९।। और यह संकल्प किया कि जब मेरे घर सन्तान होगी तब मैं अवश्य श्रीसत्यनारायण का व्रत करूँगा।।१०।। थोड़े ही समय में उसकी स्त्री लीलावती आनन्द चित्त से गर्भवती हो गयी।।११।। उसने दसवें मास में निर्मल एक कन्या को उत्पन्न किया। जैसे शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की ज्योति बढ़ती है, उसी तरह प्रतिदिन कन्या वृद्धि को प्राप्त हुई।।१२।। अपनी स्त्री के साथ साधु बनिये ने कन्या का जातकर्म कर कलावती नाम रखा।।१३।।

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03

ततो लीलावती प्राह स्वामिनं मधुरं वचः। करोषि न किमर्थं वै पुरा संकल्पितं व्रतम्॥१४॥

साधुरुवाच

विवाहसमये ह्यस्याः करिष्यामि व्रतं प्रिये!। इति भार्यां समाश्वास्य जगाम नगरं प्रति॥१५॥
ततः कलावती कन्या ववृधे पितृवेश्मनि॥१६॥
दृष्ट्वा कन्यां ततः साधुर्नगरे सखिभिः सह। मन्त्रयित्वा द्रुतं दूतं प्रेषयामास धर्मवित्॥१७॥
विवाहार्थं च कन्यायाः वरं श्रेष्ठं विचारय। तेनाज्ञप्तश्च दूतोऽसौ काञ्चनं नगरं ययौ॥१८॥
तस्मादेकं वणिक्पुत्रं समादायागतो हि सः। दृष्ट्वा तु सुन्दरं बालं वणिक्पुत्रं गुणान्वितम्॥१९॥
ज्ञातिभिर्बन्धुभिः सार्द्धं परितुष्टेन चेतसा। दत्तवान्साधुराहूय कन्यां तस्मै विधानतः॥२०॥
ततोऽभाग्यवशात्तेन विस्मृतं व्रतमुत्तमम्। विवाहसमये तस्यास्तेन रुष्टेऽभवत्प्रभुः॥२१॥

एक दिन लीलावती अपने स्वामी से मधुर वचन बोली कि—पहले का संकल्पित व्रत आप क्यों नहीं करते?॥१४॥ **साधु बोला**–हे प्रिये ! इसके विवाह के समय में इस व्रत को मैं अवश्य करूँगा। इस प्रकार स्त्री को समझा कर वह बाहर चला गया। इधर कलावती पिता के घर नित्य बढ़ने लगी॥१५-१६॥ एक दिन धर्मज्ञ साधु बनिया ने सखियों के साथ खेलती हुई लड़की को विवाह के योग्य देख **दूत को बुलाकर कहा**–॥१७॥ विवाह के निमित्त कन्या के लिये योग्य वर खोज कर ले आओ। साधु की आज्ञा पाकर दूत कांचन नगर में गये॥१८॥ उस नगर से एक वणिक्पुत्र को लेकर साधु के पास आये। उसने सुन्दर गुणयुक्त लड़के को देख॥१९॥ जाति-भाइयों के साथ प्रसन्न चित्त हो विधान पूर्वक अपनी कन्या का उस वणिक्पुत्र के साथ विवाह कर दिया॥२०॥ अभाग्यवश विवाह के समय भी उस व्रत को साधु भूल गया। तब सत्यनारायण देव क्रोधित हो गये॥२१॥

ततः कालेन नियतो निजकर्म-विशारदः। वाणिज्याकांक्षया शीघ्रं जामातृसहितो वणिक्॥२२॥
रत्नसारपुरे रम्ये गत्वा सिन्धुसमीपतः। वाणिज्यमकरोत्साधुर्जामात्रा श्रीमता सह॥२३॥
एतस्मिन्नेव काले तु सत्यनारायणः प्रभुः। भ्रष्टप्रतिज्ञमालोक्य शापं तस्मै प्रदत्तवान्॥२४॥
दारुणं कठिनं चास्य महद्-दुःखं भविष्यति॥२५॥
तस्मिन्नेव दिने राज्ञः धनमादाय तस्करः। तेनैव वर्त्मना यातः पृष्ठदेशे विलोकयन्॥२६॥
तत्पश्चाद्धावकान् दूतान् दृष्ट्वा भीतेन चेतसा। धनं संस्थाप्य तत्रैव स तु शीघ्रमलक्षितः॥२७॥
ततो दूताः समायाता यत्रासीत्सज्जनो वणिक्। दृष्ट्वा नृपधनं तत्र बद्ध्वानीतौ वणिक्सुतौ॥२८॥
हर्षयुक्ता धावमाना ऊचुर्नृपसमीपतः। तस्करौ द्वौ समानीतौ विलोक्याज्ञापय प्रभो॥२९॥
तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं दृढं बद्ध्वा तु ताबुभौ। स्थापयामास तौ दुर्गे कारागारेऽविचारतः॥३०॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां चतुर्थोऽध्यायः॥४॥

कुछ दिन बाद निजकर्म में अति चतुर साहूकार व्यापार की इच्छा से अपने दामाद को लेकर॥२२॥ समुद्र के निकट रत्नसारपुर नामक नगर में जाकर व्यापार करने लगा॥२३॥ इसी समय सत्यनारायण स्वामी ने साधु को प्रतिज्ञा से भ्रष्ट देख उसको शाप दिया कि तेरे ऊपर बड़ा भारी दुःख पड़ेगा॥२४-२५॥ उसी दिन चोरों ने राजा के धन को चुरा अपने पीछे देखते हुए साधु की दिशा को चले॥२६॥ दौड़ते हुए राजा के दूतों को आता देख डर कर धन को यहाँ ही रख कर आप छिप गये॥२७॥ राजा के दूतों ने साधु के निकट आकर राजा के धन को देखा तो साधु को बाँध कर॥२८॥ आनन्दचित्त हो राजा के निकट ले जाकर बोले कि, हे राजन् ! दो चोर लाये हैं इनको देख कर आज्ञा दीजिए॥२९॥ राजा साधु को देख कर अविचार से आज्ञा दे दिया, फिर तो उन्हें खूब बाँध कर बन्दी खाने में बन्द कर दिया॥३०॥ *इति चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः॥४॥* *

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03

अथ पञ्चमोऽध्यायः

सूत उवाच

मायया सत्यदेवस्य न श्रुतं च तयोर्वचः। ततस्तयोर्धनं यच्च गृहीतं चन्द्रकेतुना ॥१॥
तच्छापाच्च तयोर्गेहे भार्या चैवातिदुःखिता। चौरेणापहृतं सर्वं गृहे यच्च स्थितं धनम् ॥२॥
आधि-व्याधि-समायुक्ता क्षुत्पिपासा समाकुला। अन्नचितन्तापरा भूत्वा बभ्राम च गृहे गृहे ॥३॥
एवं कलावती कन्या बभ्राम प्रतिवासरम्। एकस्मिन्दिवसे रात्रौ क्षुधार्ता द्विजमन्दिरम् ॥४॥
गत्वाऽपश्यद् व्रतं तत्र सत्यनारायणस्य च। उपविश्य कथां श्रुत्वा वरं प्रार्थितवत्यपि ॥५॥
प्रसाद-भक्षणं कृत्वा ययौ रात्रौ गृहं प्रति। ततः लीलावती कन्या भर्त्सयामास तां भृशम् ॥६॥
पुत्रि रात्रौ स्थिता कुत्र किं ते मनसि वर्तते?। कन्या कलावती प्राह मातरं प्रति सादरम् ॥७॥

सूतजी बोले–सत्यदेवजी की माया से चन्द्रकेतु राजा ने उन दोनों बनियों के वचन को कुछ भी न सुना और उनका सब धन ले लिया॥१॥ श्रीसत्यनारायण के शाप से साधु और दामाद के घर पर स्त्रियाँ भी बड़ी दुःखित हो गयीं। चोरों ने घर का धन भी चुरा लिया॥२॥ आधि-व्याधि से पीड़ित और भूखी-प्यासी लीलावती अन्न की चिन्ता से घर-घर घूमने लगी॥३॥ और कलावती कन्या भी नित्य ही घूमने लगी। एक दिन रात को भूख से दुःखी कलावती एक ब्राह्मण के घर पर गई॥४॥ वहाँ सत्यनारायण के व्रत को देख कथा को सुन निज मनोरथ को माँगी॥५॥ और प्रसाद को खाकर कुछ रात गये अपने घर आई। तब **लीलावती अपनी कन्या को धिक्कारने लगी**–॥६॥ हे पुत्री ! इतनी रात तक तुम कहाँ रही? तेरे मन में क्या है? तब **कन्या माता से सत्य वचन बोली**–॥७॥

द्विजालये व्रतं मातर्दृष्टं वाञ्छित-सिद्धिदम्। तच्छ्रुत्वा कन्यकावाक्यं व्रतं कर्तुं समुद्यता ॥८॥
सा मुदा तु वणिग्भार्या सत्यनारायणस्य च। व्रतं चक्रे सैव साध्वी बन्धुभिः स्वजनैः सह ॥९॥
भर्तृजामातरौ क्षिप्रमागच्छेतां निजाश्रमम्। इति दिव्यं वरं वव्रे सत्यदेवं पुनः पुनः ॥१०॥
अपराधञ्च मे भर्तुर्जामातुः क्षन्तुमर्हसि। व्रतेन च सन्तुष्टोऽसौ सत्यनारायणः प्रभुः ॥११॥
दर्शयामास स्वप्नं हि चन्द्रकेतुं नृपोत्तमम्। वणिजौ मोचय प्रातर्वन्दिनौ नृपसत्तम ॥१२॥
देयं धनं च तत्सर्वं गृहीतं यत्त्वयाऽनयोः। न चेत्त्वां नाशयिष्यामि सराज्य-धनपुत्रकम् ॥१३॥
एवमाभाष्य राजानं ध्यानगम्योऽभवत्प्रभुः। ततः प्रभातसमये राजा च स्वजनैः सह ॥१४॥
उपविश्य सभामध्ये प्राह मन्त्रिजनं प्रति। बद्धौ महाजनौ शीघ्रं मोचय द्वौ वणिक्सुतौ ॥१५॥

हे माता मनोरथों को परिपूर्ण करने वाले श्रीसत्यनारायण के व्रत को ब्राह्मण के घर में देखी हूँ। लीलावती कन्या कलावती का वचन सुन कर श्रीसत्यनारायण के व्रत को करने के लिए उद्यत हुई॥८॥ पतिव्रता साधु की स्त्री अपनी कन्या सहित बन्धु-बान्धवों के साथ श्रीसत्यनारायण के व्रत को किया॥९॥ उसने सत्यदेव से यह दिव्य वर माँगा कि हे सत्यदेव ! हमारे पति और दामाद जल्दी अपने घर आवें॥१०॥ मेरे पति और दामाद के अपराध को आप क्षमा करने योग्य हैं, अतः क्षमा कीजिये। इससे श्रीसत्यनारायण स्वामी सन्तुष्ट हो गये॥११॥ और चन्द्रकेतु राजा को स्वप्न दिखाया कि हे राजन् ! कल सबेरे ही सज्जन बनिये को छोड़ देना॥१२॥ और उनका धन भी जो तुमने लिया है वह दे देना, नहीं तो हम धन-पुत्र के सहित तेरा राज्य नष्ट कर देंगे॥१३॥ यह बात राजा से कह कर सत्यनारायण प्रभु अन्तर्धान हो गये। तब प्रातःकाल के समय राजा निज जनों के साथ॥१४॥ सभा में उपस्थित हो मन्त्रीजनों से यह अपना स्वप्न सुना कर कहा—बाँधे हुए बनियों को शीघ्र छोड़ दो॥१५॥

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03

इति राज्ञो वचः श्रुत्वा मोचयित्वा महाजनौ। समानीय नृपस्याग्रे प्राहुस्ते विनयान्विताः ॥१६॥
आनीतौ द्वौ वणिक्-पुत्रौ मुक्तौ निगडबन्धनात्। ततो महाजनौ नत्वा चन्द्रकेतुं नृपोत्तमम् ॥१७॥
स्मरन्तौ पूर्ववृत्तान्तं नोचतुर्भयविह्वलौ। राजा वणिक्सुतौ वीक्ष्य वचः प्रोवाच सादरम् ॥१८॥
दैवात्प्राप्तं महद्दुःखमिदानीं नास्ति ते भयम्। तदा निगडसन्त्यागं क्षौरकर्माद्यकारयत् ॥१९॥
वस्त्रालङ्कारकं दत्त्वा परितोष्य नृपश्च तौ। पुरस्कृत्य वणिक्पुत्रौ वचसाऽतोषयद् भृशम् ॥२०॥
पुरानीतं च यद् द्रव्यं द्विगुणीकृत्य प्रदत्तवान्। प्रोवाच तौ ततो राजा गच्छ साधो निजाश्रमम् ॥२१॥
राजानं प्रणिपत्याह गन्तव्यं त्वत्प्रसादतः। इत्युक्त्वा तौ महावैश्यौ जग्मतुः स्वगृहं प्रति ॥२२॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां पञ्चमोऽध्यायः॥५॥

ऐसा आदेश दिया, यह सुन कर दूत लोग बनियों को बन्दीखाने से छुड़ा कर राजा के निकट लाये और विनय युक्त वचन बोले—॥१६॥ हे महाराज ! हम इन दोनों बनियों को बन्धन से छुड़ा कर लाये हैं। अब आपकी क्या आज्ञा है? उन दोनों ने महाराज चन्द्रकेतु को नमस्कार कर पूर्व वृत्तान्त का स्मरण करते हुए राजा चन्द्रकेतु से साधु तथा दामाद ने कुछ नहीं कहा। वणिक्पुत्रों को देख कर **राजा आदर से बोला**–॥१७-१८॥ अभाग्यवश तुमको बड़ा दुःख मिला, अब आप लोग भय न करना। इस प्रकार राजा ने कह कर उन दोनों के हाथ-पैर की हथकड़ी-बेड़ी कटवा कर क्षौर-कर्म कराया॥१९॥ फिर वस्त्र और आभूषणादि देकर बनिया को अत्यन्त सन्तुष्ट किया॥२०॥ पहले जितना धन लिया था, उसका दूना धन देकर कहा— अब आप अपने घर जायें॥२१॥ दोनों बनियों ने राजा को नमस्कार कर कहा कि आपकी कृपा से घर जाते हैं॥२२॥

इति पञ्चमोऽध्यायः समाप्तः॥५॥

अथ षष्ठोऽध्यायः

सूत उवाच

पूजां तु कृतवान्साधुर्मङ्गलाचारपूर्विकाम्। ब्राह्मणेभ्यो धनं दत्त्वा तदा तु नगरं ययौ ॥१॥
किञ्चिद् दूरं गते साधौ सत्यनारायणः प्रभुः। जिज्ञासां कृतवान्साधो किमस्ति तव नौस्थितम् ॥२॥
ततो महाजनौ मत्तौ हेलया च प्रहस्य वै। कथं पृच्छसि भो दण्डिन्! मुद्रां नेतुं किमिच्छसि ॥३॥
लतापत्रादिकं चैव वर्तते तरणौ मम। निष्ठुरं तद्वचः श्रुत्वा सत्यं भवतु ते वचः ॥४॥
एवमुक्त्वा गतः शीघ्रं दण्डी तस्य समीपतः। किञ्चिद् दूरं ततो गत्वा स्थितः सिन्धुसमीपतः ॥५॥
गते दण्डिनि साधुश्च कृतनित्यक्रियस्तदा। उत्थितां तरणीं दृष्ट्वा विस्मयं परमं ययौ ॥६॥
दृष्ट्वा लतादिकं तत्र मूर्च्छितो न्यपतद् भुवि। लब्धसंज्ञो वणिक्पुत्रो भृशं चिन्तापरोऽभवत् ॥७॥

सूतजी बोले–साधु, भगवान् को मंगलाचार पूर्वक पूजा कर ब्राह्मणों को धन देकर निज नगर को चला॥१॥ कुछ दूर जाने पर श्रीसत्यनारायण देव ने वैश्य के मन की बात जानने के लिये पूछा कि तुम्हारी नाव में क्या है?॥२॥ मदोन्मत्त महाजन बनियाँ हँस कर बोला—दण्डिन् ! यह क्यों पूछते हो क्या धन लेने की इच्छा है?॥३॥ मेरी नाव में लता-पत्रादिक है, तब दण्डी ऐसे वचनों को सुन कर बोले कि तेरा वचन सत्य हो॥४॥ ऐसा कह कर आप समुद्र के पास बैठ गये। दण्डी के चले जाने पर नित्यक्रिया कर नाव को ऊपर उठा देख साधु को आश्चर्य हुआ॥५-६॥ ज्योंही उसने नाव में लतादिक देखा त्योंही मूर्च्छा को प्राप्त हो भूमि पर गिर गया और सचेत होने पर अति चिन्ता करने लगा॥७॥

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03

तदा तु दुहितुः कान्तो वचनं चेदमब्रवीत्। किमर्थं क्रियते शोकः शापो दत्तश्च दण्डिना ॥८॥
शक्यते तेन सर्वं हि कर्तुं चाऽत्र न संशयः। अतस्तच्छरणं यामो वाञ्छितार्थो भविष्यति ॥९॥
जामातुर्वचनं श्रुत्वा तत्सकाशं गतस्तदा। दृष्ट्वा च दण्डिनं भक्त्या नत्वा प्रोवाच सादरम् ॥१०॥
क्षमस्व चापराधं मे यदुक्तं तव सन्निधौ। एवं पुनः पुनर्नत्वा महाशोकाकुलोऽभवत् ॥११॥
प्रोवाच वचनं दण्डी विलपन्तं विलोक्य च। मा रोदीः शृणु मे वाक्यं मम पूजा बहिर्मुखः ॥१२॥
ममेच्छया च दुर्बुद्धे लब्धं दुःखं मुहुर्मुहुः। तच्छ्रुत्वा भगवद्वाक्यं स्तुतिं कर्तुं समुद्यतः ॥१३॥

साधुरुवाच

त्वन्मायामोहिताः सर्वे ब्रह्माद्यास्त्रिदिवौकसः। न जानन्ति गुणं रूपं तवाश्चर्यमिदं प्रभो! ॥१४॥

साधु से दामाद बोला कि व्यर्थ शोक क्यों करते हो? उन्हीं दण्डी महाराज ने शाप दिया है।।८।। वे सब कुछ कर सकते हैं इसमें संशय नहीं। इसलिए उन्हीं की शरण में चलें, क्योंकि मनोरथ उन्हीं से सिद्ध होगा।।९।। साधु दामाद के वचन सुनकर दण्डी के पास गया और दण्डी को प्रणाम कर भक्ति से देखकर **वैश्य आदरयुक्त वचन बोला–**।।१०।। जो मैंने आपसे कहा था उस अपराध को क्षमा कीजिये। यह कह कर बारम्बार नमस्कार कर शोकाकुल हो गया।।११।। तब दण्डी उसको रोते हुए देख कर बोले—रोओ मत, मेरे वचन को सुन, तू मेरी पूजा से सदा मुँह फेरे रहता है।।१२।। और मेरी इच्छा से हे दुर्बुद्धे ! तुझे बारम्बार दुःख मिला। भगवान् का यह वचन सुन कर साधु स्तुति करने लगा।।१३।। **साधु बोला कि,** स्वामिन् ! आपकी माया से मोहित ब्रह्मादि देवता भी आपके बड़े अद्भुत गुण और रूप को नहीं जानते।।१४।।

मूढोऽहं त्वां कथं जाने मोहितस्तव मायया। प्रसीद पूजयिष्यामि यथाविभवविस्तरैः ॥१५॥
पुरा वित्तं च तत् सर्वं त्राहि मां शरणागतम्। श्रुत्वा भक्तियुतं वाक्यं परितुष्टो जनार्दनः ॥१६॥
वरञ्च वाञ्छितं दत्त्वा तत्रैवाऽन्तर्दधे हरिः। ततो नावं समारुह्य दृष्ट्वा वित्तप्रपूरिताम्॥१७॥
कृपया सत्यदेवस्य सफलं वाञ्छितं मम। इत्युक्त्वा स्वजनैः सार्द्धं पूजां कृत्वा यथाविधि॥१८॥
हर्षेण सोऽभवत्पूर्णं सत्यदेवप्रसादतः। नावं संयोज्य यत्नेन स्वदेशं गमनं कृतम्॥१९॥
ततो जामातरं प्राह पश्य रत्नपुरीं मम। दूतं च प्रेषयामास निजवित्तस्य रक्षकम्॥२०॥
स दूतो नगरं गत्वा साधोर्भार्यां विलोक्य च। प्रोवाच वाञ्छितं वाक्यं नत्वा बद्धाञ्जलिस्तदा॥२१॥

तब आपकी माया से मोहित मैं मूढ़ आपको कैसे जान सकता हूँ। अतः हमारे ऊपर प्रसन्न हो जाइये। मैं यथा-विभव विस्तार से आपका पूजन करूँगा।।१५।। मैं आपके शरणागत हूँ। मुझे पहिले वाला सब धन दीजिये। उसके भक्तियुक्त वचन सुन भगवान् सन्तुष्ट हो गये।।१६।। और मनोवाञ्छित वर देकर वहाँ से अन्तर्धान हो गये। साधु नाव को धन से परिपूर्ण देख उस पर चढ़ गया।।१७।। सत्यदेव की कृपा से मनोरथ पूर्ण हुआ। यह बात अपने स्वजनों से कह, यथाविधि पूजन कर।।१८।। सत्यदेव की कृपा से बड़ा हर्षित हुआ। नाव को यत्न से सहेज कर अपने देश को चल दिया।।१९।। अपने नगर में समीप साधु आकर दामाद से कहने लगा कि वह मेरी रत्नपुरी देखो। ऐसा कह कर उसने धन की रक्षा करने वाले दूत को वहाँ भेजा।।२०।। वह दूत नगर में जाकर साधु की धर्मपत्नी को देख प्रणाम कर बोला कि—।।२१।।

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03

निकटे नगरस्यैव जामात्रा सहितो वणिक्। आगतो बन्धुवर्गैश्च वित्तैश्च बहुभिर्युतः ॥२२॥
श्रुत्वा दूतमुखाद्वाक्यं महाहर्षवती सती। सत्यपूजां ततः कृत्वा प्रोवाच तनुजां प्रति ॥२३॥
व्रजामि शीघ्रमागच्छ साधुसन्दर्शनाय च। इति मातृवचः श्रुत्वा व्रतं कृत्वा समाप्य च ॥२४॥
प्रसादञ्च परित्यज्य गता साऽपि पतिं प्रति। तेन रुष्टः सत्यदेवो भर्तारं तरणीं तथा ॥२५॥
संहृत्य च जनैस्सार्द्धं जले तस्याममज्जयत्। ततः कलावती कन्या न विलोक्य निजं पतिम् ॥२६॥
शोकेन महता युक्ता रुदन्ती चापतद् भुवि। दृष्ट्वा तथाविधां कन्यां विह्वला बहुदुःखिताम् ॥२७॥
भीतेन मनसा प्राह किमाश्चर्यमिदं भवेत्। चिन्त्यमानाश्च ते सर्वे बभूवुस्तरिवाहकाः ॥२८॥
ततो लीलावती कन्यां दृष्ट्वा सा विह्वलाऽभवत्। विललापातिदुःखेन भर्तारं चेदमब्रवीत् ॥२९॥

ग्राम के निकट दामाद सहित साहुकार बहुत-से इष्ट-मित्र और धन के साथ आ गये हैं।।२२।। दूत के मुख से ऐसे वचन सुन कर साधु की स्त्री बड़ी हर्षित हो सत्यदेव का पूजन कर कन्या से कहने लगी कि—।।२३।। मैं जाती हूँ तुम भी शीघ्र व्रत समाप्त कर आओ। लड़की इस प्रकार वचन सुन कर जल्दी व्रत समाप्त कर।।२४।। प्रसाद को भूल से न खाकर अपने पति को देखने चली गयी। इससे सत्यदेव ने क्रोधित होकर उसके पति को नाव सहित जल में डुबो दिया। कलावती कन्या अपने पति को न देख कर बड़े शोक से रोती हुई भूमि पर गिर पड़ी। साधु ने कन्या को अति दुःखित देख कर, डरे हुए मन से कहा—यह क्या हुआ? और नाव चलाने वाले भी चिन्ता करने लगे।।२५-२८।। तब लीलावती कन्या को दुःखी देख अति विह्वल होकर रोने और अपने पति से कहने लगी।।२९।।

इदानीं नौकया सार्धं कथं सोऽभूदलक्षितः। न जाने केन देवेन हेलया चैव तत्कृतम् ॥३०॥
सत्यदेवस्य माहात्म्यं ज्ञातुं वा केन शक्यते। इत्युक्त्वा विललापैव ततश्च स्वजनैः सह ॥३१॥
ततो लीलावतीं कन्यां क्रोडे कृत्वा रुरोद ह। ततः कलावती कन्या नष्टे स्वामिनि दुःखिता ॥३२॥
गृहीत्वा पादुकां तस्याऽनुगन्तुं च मनो दधे। कन्यायाश्चरितं दृष्ट्वा सभार्यः सज्जनो वणिक् ॥३३॥
अतिशोकेन सन्तप्तश्चिन्तयामास धर्मवित्। हृतं वा सत्यदेवेन भ्रान्तोऽहं सत्यमायया ॥३४॥
सत्यपूजां करिष्यामि यथाविभवविस्तरैः। इति सर्वान्समाहूय कथितं च मनोरथम् ॥३५॥
नत्वा च दण्डवद् भूमौ सत्यदेवं पुनः पुनः। ततस्तुष्टः सत्यदेवो दीनानां परिपालकः ॥३६॥
प्रोवाच वचनं चैतत्कृपया भक्तवत्सलः। त्यक्त्वा प्रसादं सा कन्या पतिं द्रष्टुं समागता ॥३७॥

इसी क्षण नाव के साथ वे कैसे अलक्षित हो गये? न जाने किस देवता के अनादर से चौका जल में नहीं दीख रही है।।३०।। श्रीसत्यदेव के माहात्म्य को कौन जान सकता है, यह कह कर वह अपने जनों के साथ विलाप करती हुई।।३१।। कन्या को गोद में लेकर रोने लगी और कलावती भी स्वामी को न देखने से अति दुःखित हो।।३२।। पति की पादुका लेकर सती होने की इच्छा करने लगी। कन्या का यह चरित्र देख कर धर्मज्ञ साधु बनिया स्त्री के साथ।।३३।। अत्यन्त शोक से युक्त होकर विचार करने लगा कि मैं सत्यदेव की माया से बारम्बार छला गया हूँ।।३४।। अब यथाविभव श्रीसत्यनारायण का पूजन करूँगा। इस प्रकार सबको बुला कर कहने लगा।।३५।। और बारम्बार पृथ्वी पर गिर कर सत्यनारायण भगवान् को साष्टांग दण्डवत् किया। इसी पर दीनों के पालन करने वाले सत्यनारायण भगवान् सन्तुष्ट हो गये। भक्तवत्सल सत्यदेवजी की कृपा से आकाशवाणी हुई कि तुम्हारी कन्या प्रसाद को त्याग कर पति को देखने चली आई।।३६-३७।।

Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03
VIVO V50 | ZEISS

अतोऽदृष्टोऽभवत्तस्याः कन्यकायाः पतिर्ध्रुवम्। गृहं गत्वा प्रसादं च भुक्त्वा चायाति चेत्पुनः ॥३८॥
लब्धभर्तृसुता साधो भविष्यति न संशयः। कन्यका तादृशं वाक्यं श्रुत्वा गगनमण्डलात् ॥३९॥
क्षिप्रमेवं गृहं गत्वा प्रसादं च बुभोज सा। तत्पश्चात्पुनरागत्य सा ददर्श निजं पतिम् ॥४०॥
ततः कलावती तुष्टा जगाद पितरं प्रति। इदानीं च गृहं याहि विलम्बं कुरुषे कथम् ॥४१॥
तच्छ्रुत्वा कन्यकावाक्यं सन्तुष्टोऽभूद्वणिक्सुतः। धनैर्बन्धुजनैस्सार्द्धं जगाम निजमन्दिरम् ॥४२॥
मासि मासि च संक्रान्तौ व्रतं कृत्वा यथाविधि। इह लोके सुखं भुक्त्वा चान्ते सत्यपुरं ययौ ॥४३॥
अथाऽन्यच्च प्रवक्ष्यामि शृणुध्वं मुनिसत्तमाः ॥४४॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां षष्ठोऽध्यायः॥६॥

इसी कारण इसका पति अदृश्य हो गया है। यदि वह पुनः घर जाकर प्रसाद भक्षण कर आयेगी॥३८॥ तब पति को निःसन्देह पायेगी। कन्या ने यह आकाशवाणी सुन कर॥३९॥ शीघ्र ही घर जाकर प्रसाद को भक्षण कर अपने पति को देखा॥४०॥ तब **कलावती सन्तुष्ट होकर अपने पिता से कहने लगी कि,** अब शीघ्र ही घर चलिये, विलम्ब न करिये॥४१॥ कन्या के वचन सुन कर साधु दामाद सहित सन्तुष्ट होकर धन और बन्धुओं के साथ अपने घर को गया॥४२॥ उस दिन से वह हर महीने और संक्रान्ति पर विधि पूर्वक सत्यदेव की पूजा करने लगा। इस तरह सुख प्राप्त कर वह अन्त में सत्यदेव के लोक को चला गया॥४३॥ **फिर सूतजी कहने लगे कि,** हे मुनिश्रेष्ठ ! हम आपसे और भी कथा अब कहता हूँ॥४४॥

इति षष्ठोऽध्यायः समाप्तः॥६॥

अथ सप्तमोऽध्यायः

सूत उवाच

आसीत् तुङ्गध्वजो राजा प्रजापालनतत्परः। प्रसादं सत्यदेवस्य त्यक्त्वा दुःखमवाप सः ॥१॥
एकदा स वनं गत्वा हत्वा बहुविधान् पशून्। आगत्य वटमूलं च दृष्ट्वा सत्यस्य पूजनम् ॥२॥
गोपाः कुर्वन्ति सन्तुष्टा भक्तियुक्ताः सबान्धवाः। राजा दुष्ट्वा तु दर्पेण न गता न ननाम सः ॥३॥
ततो गोपगणाः सर्वे प्रसादं नृपसन्निधौ। संस्थाप्य पुनरागत्य भक्त्या सर्वे यथेप्सितम् ॥४॥
इदं प्रसादं सन्त्यज्य राजा दुःखमवाप सः। तस्य पुत्रशतं नष्टं धनधान्यादिकं च यत् ॥५॥

सूतजी बोले–प्रजा-पालन में तत्पर एक तुङ्गध्वज नामक राजा था, जिसने सत्यदेव के प्रसाद को त्यागने से अति दुःख पाया॥१॥ एक दिन उसने वन में जाकर मृगादि अनेक पशुओं को मारा और पीछे आकर वटवृक्ष के नीचे श्रीसत्यदेव भगवान् का पूजन देखा॥२॥ जिसको गोप लोग बन्धु-बान्धवयुक्त सन्तुष्ट चित्त से करते थे। अहंकार से राजा वहाँ न गया, न सत्यदेव को प्रणाम ही किया॥३॥ जब वे गोप राजा को प्रसाद देने लगे तो राजा ने प्रसाद को नहीं लिया। तब वे गोप वहाँ प्रसाद रख कर चले आये। राजा ने प्रसाद का अनादर किया॥४॥ इस तरह प्रसाद का अनादर करने से उसने अति दुःख पाया। उस राजा के एक सौ पुत्र थे वे मर गये और धन-धान्य भी नष्ट हो गये॥५॥

vivo V50 | ZEISS
Pd·kundan shastri 03/22/2026, 18:03

सत्यदेवेन तत्सर्वं नाशितं मम निश्चितम्। अतस्तत्रैव गच्छामि यत्र देवस्य पूजनम्॥ ६॥
इति सञ्चिन्त्य मनसा ययौ गोपालसन्निधौ। ततोऽसौ सत्यदेवस्य पूजां गोपगणैः सह॥ ७॥
भक्तिश्रद्धान्वितो भूत्वा चकार विधिना नृपः। सत्यदेव - प्रसादेन धनपुत्रान्वितोऽभवत्॥ ८॥
इह लोके सुखं भुक्त्वा पश्चात्सत्यपुरं ययौ। य इदं कुरुते सत्यव्रतं परमदुर्लभम्॥ ९॥
शृणोति च कथां पुण्यां भक्तियुक्तः फलप्रदाम्। धनधान्यादिकं तस्य भवेत्सत्यप्रसादतः॥१०॥
दरिद्रो लभते वित्तं बद्धो मुच्येत बन्धनात्। भीतो भयात्प्रमुच्येत सत्यमेव न संशयः॥११॥
ईप्सितञ्च फलं भुक्त्वा चान्ते सत्यपुरं व्रजेत्। इति वः कथितं विप्राः सत्यनारायणव्रतम्॥१२॥

तब राजा ने अपने मन में विचार किया कि सत्यदेव ने ही धन नष्ट कर दिया है इसलिये मैं वहीं जाऊँ जहाँ सत्यदेव का पूजन होता था॥६॥ यह विचार वहाँ जाकर अहीरों के साथ भक्ति-श्रद्धायुक्त होकर विधि से उसने सत्यदेव का पूजन किया। तब सत्यदेव के प्रसाद से धन-पुत्रादि युक्त हुआ॥७-८॥ और इस लोक में सुख पाकर अन्त में सत्यलोक को गया। जो प्राणी अति दुर्लभ इस सत्यदेव के व्रत को करता है और भक्तियुक्त होकर पवित्र फल देने वाली कथा को सुनता है उसको सत्यदेव के प्रसाद से धन-धान्यादिक प्राप्त होते हैं॥९-१०॥ दरिद्र धन पावे, कैदी छूट जावे, भयार्त भय से छूटे। इसमें कोई संशय नहीं है॥११॥ इस पुनीत व्रत के करने से प्राणी सदा सुख पाकर अन्त में सत्यदेव के लोक में जाता है। **सूतजी कहते हैं–** हे विप्रो ! मैंने सत्यनारायण के व्रत को आप लोगों से कहा॥१२॥

यत्कृत्वा सर्वदुःखेभ्यो मुक्तो भवति मानवः। विशेषतः कलियुगे सत्यपूजा फलप्रदा॥१३॥
केचित्कालं वदिष्यन्ति सत्यमीशं तमेव हि। सत्यनारायणं केचित्सत्यदेवं तथापरे॥१४॥
नानारूपधरो भूत्वा सर्वेषामीप्सितप्रदः। भविष्यति कलौ विष्णुः सत्यरूपी सनातनः॥१५॥
य इदं पठते नित्यं शृणोति मुनिसत्तमाः। तस्य नश्यन्ति पापानि सत्यदेवप्रसादतः॥१६॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां सप्तमोऽध्यायः॥७॥

*

जिसके करने से मनुष्य सब दुःखों से छूट जाता है। विशेष कर सत्यदेव की पूजा कलिकाल में फल देने वाली है॥१३॥ उन्हीं को कोई काल, कोई सत्य, कोई परमेश्वर, कोई सत्यनारायण और कोई सत्यदेव कहेंगे॥१४॥ सत्यरूपी विष्णु सनातन कलियुग में अनेक रूप धारण कर सबको वाञ्छित फल देने वाले होंगे॥१५॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! जो प्राणी इसको पढ़ता या सुनता है, उसके सम्पूर्ण पाप सत्यदेव के प्रसाद से नष्ट हो जाते हैं, इसमें कुछ भी संशय नहीं है॥१६॥

इति सप्तमोऽध्यायः समाप्तः॥७॥

*

vivo V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03

कथा के पश्चात् हवन

मुष्टिका बँधे हाथ के बराबर लम्बी-चौड़ी वेदी गोबर से लीप कर आम या पलाश की लकड़ी रख अग्नि-स्थापना कर यजमान हवन करने वाले ब्राह्मणों का वरण कर, दक्षिणा देवे। पहले ब्राह्मण घृत की तीन आहुतियाँ दें।

१. ॐ प्रजापतये नमः। इदं प्रजापतये स्वाहा। २. ॐ इन्द्राय नमः। इदम् इन्द्राय स्वाहा। ३. ॐ अग्नये नमः। इदम् अग्नये स्वाहा। इसके बाद शाकल्य की प्रथम दो आहुति अधिदेवता और प्रत्यधिदेवता को देवे।

१. ॐ अग्न्यधिदेवताभ्यो नमः। इदमग्नये स्वाहा। २–ॐ प्रजापति-प्रत्यधिदेवताभ्यो नमः। इदम् प्रजापतये स्वाहा। पश्चात् गणेश, गौरी, नवग्रह (सूर्य, चन्द्रमा इत्यादि), वरुण आदि को क्रमशः आहुति देवे।

१. ॐ श्रीगणेशाय नमः। इदं श्रीगणेशाय स्वाहा। २. ॐ गौर्यै नमः। इदं गौर्यै स्वाहा। ३. ॐ सूर्याय नमः। इदं सूर्याय स्वाहा। ४. ॐ चन्द्रमसे नमः। इदं चन्द्रमसे स्वाहा। ५. ॐ मङ्गलाय नमः। इदं मङ्गलाय स्वाहा। ६. ॐ बुधाय नमः। इदं बुधाय स्वाहा। ७. ॐ बृहस्पतये नमः। इदं बृहस्पतये स्वाहा। ८. ॐ शुक्राय नमः। इदं शुक्राय स्वाहा। ९. ॐ शनये नमः। इदं शनये स्वाहा। १०. ॐ राहवे नमः। इदं राहवे स्वाहा। ११. ॐ केतवे नमः। इदं केतवे स्वाहा। १२. ॐ वरुणाय नमः। इदं वरुणाय स्वाहा। १३. ॐ वास्तोष्पतये नमः। इदं वास्तोष्पतये

स्वाहा। १४. ॐ पञ्चलोकपालदेवताभ्यो नमः। इदं तेभ्यः स्वाहा। १५. ॐ क्षेत्राधिपतये नमः। इदं क्षेत्राधिपतये स्वाहा। १६. ॐ इन्द्रादिदश-दिग्पालदेवताभ्यो नमः। इदं तेभ्यः स्वाहा।

ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः। इदं तेभ्यः स्वाहा। ॐ कुलदेवताभ्यो नमः। इदं तेभ्यः स्वाहा। ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः। इदं तेभ्यः स्वाहा। फिर शेष शाकल्य की कथा के प्रधान देवता श्रीसत्यनारायण भगवान् को ८ या २८ या १०८ आहुतियाँ देवे, फिर पान पर सुपारी, थोड़ा शाकल्य रख पूर्णाहुति देवे। इसके बाद कपूर प्रज्वलित कर यजमान आरती करे। आरती के समय वेद या उस देवता के प्रार्थनात्मक मन्त्र या श्लोक का पाठ करे, नहीं तो 'कर्पूरगौरं०' को पढ़े। आरती के बाद यजमान को हवन की विभूति लगावे। रक्षा सूत्र बाँधे। 'यान्तु देवगणाः सर्वे०' इससे हवन समाप्त करे। इति ।

श्रीसत्यनारायणव्रतोद्यापनम्

कस्मिंश्चित् सुदिने सपत्नीको यजमानः पूर्णिमायां प्रदोषसमये स्नात्वा धौतवाससी परिधाय कृतचन्दनादितिलकः सपवित्रकरः सायं सन्ध्यां कृत्वा, वेद्याः पश्चिमतः स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य, आचम्य प्राणानायम्य ताम्रपात्रे जलतिलाक्षतपुष्पफलदूर्वाद्रव्याणि गृहीत्वा, देशकालौ सङ्कीर्त्य ''मम आत्मनः, इह जन्मनि जन्मान्तरे च कृतसमस्तपापक्षयार्थं धर्मार्थकाममोक्षचतुर्वर्गफलप्राप्तिद्वारा श्रीसत्यनारायणप्रीतये (अमुककामादि) आचरितसत्यनारायणस्योद्यापनं करिष्ये'' इति सङ्कल्पं कृत्वा, ततः-गणेशपूजनपूर्वकमाचार्यादिवरणं च मत्कृतग्रहशान्त्यनुसारेण कृत्वा आचार्यः सर्वतोभद्रे ब्रह्मादिदेवताः

Pd kundan shastri, 03/22/2026, 18:03
VIVO V50 | ZEISS

सम्पूज्य तत्र मध्यकमले कलशस्थापन-विधिना कलशं संस्थाप्य अग्न्युत्तारणपूर्वक-कर्षपरिमितसुवर्णरचितां सत्यनारायणप्रतिमां शालग्रामं च संस्थाप्य ध्यायेत्—ॐ नारायणं सान्द्रवन्द्यावदातं चतुर्भुजं पीतमहार्हवाससम्। प्रसन्नवक्त्रं नवकञ्जलोचनं सनन्दनाद्यैरुपसेवितं भजे।।'' इति ध्यात्वा षोडशोपचारैः संस्थापयेत्। ततः- ''ॐ नवाम्भोजनेत्रं रमाकेलिपात्रं चतुर्बाहुचामीकरं चारुगात्रम्। जगत्त्राणहेतुं रिपौ धूमकेतुं सदा सत्यनारायणं स्तौमि नित्यम्।।'' इति प्रार्थ्य, ततः-प्रसादभक्षणं च कृत्वा नृत्यगीतवाद्य-पुराणकथाश्रवणादिना रात्रौ जागरणं कुर्यात्। ततः प्रभाते स्नानादिक्रियां निवर्त्य पुनः पूर्ववत्सम्पूज्य स्थण्डिले पञ्चभूसंस्कारपूर्वकमग्निं संस्थाप्य तिलव्रीहियवशर्कराघृतपायसद्रव्यैरष्टोत्तरशतं जुहुयात्। तत्र मन्त्रः—''ॐ नमो भगवते नित्यं सत्यदेवाय धीमहि। चतुःपदार्थदात्रे च नमस्तुभ्यं नमो नमः स्वाहा'' इदं सत्यनारायणाय न मम। १०८ इत्यनेन हुत्वा पुरुषसूक्तेन च प्रत्यृचमाज्यं जुहुयात्। ततः सर्वतोभद्रदेवताभ्यश्चैकैकयाहुत्या आज्यभागान्तं च कृत्वा नवाहुतीर्हुत्वा बलिः कर्मारभ्य पूर्णाहुत्यन्तं कुर्यात्। ततः आचार्यं वस्त्रादिभिः सम्पूज्य सोपस्करां प्रतिमां व्रतपूर्तये सवत्सां गां च दद्यात्। शक्तौ तस्यां सोपस्करां शय्यां पञ्चदशजलपूरितघटान् वस्त्रदक्षिणासहितान् दत्वा पञ्चदशब्राह्मणान् यथाशक्ति वा गोधूमचूर्णकृतभक्ष्यभोज्यादि पायसेन च भोजयेत्। ततो दक्षिणाभिस्तान् प्रतोष्य आशिषा गृहीत्वा स्वज्ञातिभ्यः कथाश्रोतृभ्यश्च भगवत्प्रसादं दत्वा बन्धुभिः सह वाग्यतो भुञ्जीतेति शिवम्।

इति सत्यनारायणव्रतोद्यापनम्। 卐

अथ सत्यनारायणाष्टकम्

आदिदेवं जगत्कारणं श्रीधरं, लोकनाथं विभुं व्यापकं शंकरम्।
सर्वभक्तेष्टदं मुक्तिदं माधवं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे ॥ १ ॥
सर्वदा लोककल्याणपारायणं, देवगोविप्ररक्षार्थसद्विग्रहम्।
दीनहीनात्मभक्ताश्रयं सुन्दरं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे ॥ २ ॥
दक्षिणे यस्य गंगा शुभा शोभते, राजते सा रमा यस्य वामे सदा।
यः प्रसन्नाननो भाति भव्यश्च तं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे ॥ ३ ॥
सङ्कटे सङ्गरे यं जनः सर्वदा, स्वात्मभीनाशनाय स्मरेत् पीडितः।
पूर्णकृत्यो भवेद् यत्प्रसादाच्च तं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे ॥ ४ ॥
वाञ्छितं दुर्लभं यो ददाति प्रभुः, साधवे स्वात्मभक्ताय भक्तिप्रियः।
सर्वभूताश्रयं तं हि विश्वम्भरं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे ॥ ५ ॥
ब्राह्मणः साधु-वैश्यश्च तुंगध्वजो, येऽभवन् विश्रुता यस्य भक्त्याऽमराः।
लीलया यस्य विश्वं ततं तं विभुं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे ॥ ६ ॥

VIVO V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:03

येन चाब्रह्मबालतृणं धार्यते, सृज्यते पाल्यते सर्वमेतज्जगत् ।
उक्तभावप्रियं श्रीदयासागरं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे ॥ ७ ॥
सर्वकामप्रदं सर्वदा सत्प्रियं, वन्दितं देववृन्दैर्मुनीन्द्रार्चितम् ।
पुत्रपौत्रादिसर्वेष्टदं शाश्वतं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे ॥ ८ ॥
अष्टकं सत्यदेवस्य भक्त्या नरः, भावयुक्तो मुदा यस्त्रिसन्ध्यं पठेत् ।
तस्य नश्यन्ति पापानि तेनाऽग्निना, इन्धनानीव, शुष्काणि सर्वाणि वै ॥ ९ ॥

इति श्रीसत्यनारायणाष्टकं सम्पूर्णम्।

आरती जय जगदीश हरे

ॐ जय जगदीश हरे स्वामी जय जगदीश हरे। भक्त जनों के संकट क्षण में दूर करे ॥ ॐ जय० ॥
जो ध्यावे फल पावे दुःख बिनसे मन का। सुख-सम्पत्ति घर आवे कष्ट मिटे तन का ॥ ॐ जय० ॥
मात-पिता तुम मेरे शरण गहूँ मैं किसकी। तुम बिन और न दूजा आस करूँ जिसकी ॥ ॐ जय० ॥
तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तरयामी। पारब्रह्म परमेश्वर तुम सबके स्वामी ॥ ॐ जय० ॥
तुम करुणा के सागर तुम पालन कर्ता। मैं मूरख खल कामी कृपा करो भर्ता ॥ ॐ जय० ॥
तुम हो एक अगोचर सबके प्राणपती। किस विधि मिलूँ दयामय तुमको मैं कुमती ॥ ॐ जय० ॥
दीनबन्धु दुःख हरता तुम रक्षक मेरे। करुणा हस्त उठावो द्वार पड़ा तेरे ॥ ॐ जय० ॥
विषय-विकार मिटाओ पाप हरो देवा। श्रद्धा-भक्ति बढ़ाओ सन्तन की सेवा ॥ ॐ जय० ॥
श्रीजगदीश्वरजी की आरती जो कोई नर गावे। कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावे ॥ ॐ जय० ॥

*

श्रीसत्यदेव-स्तुति

श्रीसत्यदेव भगवान् की सरन सदा सुख खान। सकल मनोरथ देत प्रभु जो नर कर गुणगान ॥१॥
दीनबन्धु श्रीनाथजी निज जन तारक ईश। द्रवहुँ सदा इस दास पै करुणामय जगदीश ॥२॥
परम पिता परमेश्वर हे! मैं पतितन सिरताज। बेगि उबारहु जानि निज करहु सकल शुभ काज ॥३॥
तुम सम हे करुणानिधे! करत कौन उपकार। अगणित गणिकादिक तरे, साखि वेद हैं चार ॥४॥
दयासिंधु नहिं देखते भक्तन के दुःखभार। विविध ताप दुःख दूर कर भव से करते पार ॥५॥
श्रीसत्यदेव भगवान् की कथा जगत् में सार। शरन तेहि की जो लहै ताहि होत उद्धार ॥६॥
द्विजवर लकड़िहार और साधु वैश्य परिवार। चन्द्रकेतु और तुङ्गध्वज, पाँच कथा जगसार ॥७॥
इन भक्तन के काज प्रभु प्रकटे बारम्बार। सकल मनोरथ सिद्ध करि, दिये पदारथ चार ॥८॥
जन्म-जन्म विनती यही श्री चरणों में ध्यान। सज्जन संगति, हरि भजन, दान-धर्म, दृढ़ ज्ञान ॥९॥
स्तुति प्रभु की प्रेम से पढ़े कपट तजि चित्त। चार पदारथ देत तेहि प्रभु मन चाहा चित्त ॥१०॥
बार-बार विनती यही श्रीसत्यदेव भगवान। पार करो भवसिन्धु से सेवक अपना जान ॥११॥

*

Pulkundan shastri | VIVO V50 | ZEISS 03/22/2026, 18:04

श्रीसत्यनारायणजी की आरती

आरती कीजै सत्यनारायण स्वामीजी की, हरि भक्ति करहुँ संतन सुख दीजै जी॥ टेक॥

पहली आरति पुष्प की माला पुष्प की माला हरिहर पुष्प की माला। कालीनाग नाथ लाये कृष्ण गोपाल जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥ १ ॥

दूसरी आरति देवकी नन्दन, देवकी नन्दन हरिहर देवकी नन्दन, भक्त उबारन असुर निकन्दन जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥ २ ॥

तीसर आरति त्रिभुवन मोहै त्रिभुवन मोहै, हरिहर त्रिभुवन मोहै, गरुड़ सिंहासन राजा रामचन्द्र शोभै जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥ ३ ॥

चौथी आरति चहु युग पूजा, चहु युग पूजा, हरिहर चहु युग पूजा। राम नाम औरो न दूजा जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥ ४ ॥

पञ्च आरति रामजी के भावै, रामजी के भावै, हरिहर रामजी के भावै। रामनाम गाई परम पद पावै जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥ ५ ॥

षष्ठही आरति लछुमन भ्राता, लछुमन भ्राता, हरिहर लछुमन भ्राता। आरति उतारे कौशल्या माताजी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥ ६ ॥

सप्तम आरति कीजै ऐसी, कीजै ऐसी, हरिहर कीजै ऐसी। ध्रुव प्रह्लाद विभीषण जैसी जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥ ७ ॥

अष्टम आरति लंका सिधारे, लंका सिधारे, हरिहर लंका सिधारे। रावण मारी विभीषण जैसी जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥ ८ ॥

नवम आरति बावन देवा, बावन देवा, हरिहर बावन देवा। बली के द्वार करब हरि सेवा जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥ ९ ॥

कञ्चन थाल कपूर की बाती, कपूर की बाती। जगमग ज्योत जरै सारी राति जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥१०॥

जो राजाराम जी की आरती गावै, आरति गावै हरिहर आरति गावै। बसी बैकुण्ठ अमर पद पावै जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥११॥

सत्य देव प्रभु की यह आरति, सत्यदेव प्रभु की यह आरति। सब मिली प्रेम से गावै जी।
आरती कीजै राजा रामचन्द्र की॥१२॥

*

VIVO V50 | ZEISS
Pd kundan shastri 03/22/2026, 18:04

बिंदी
सिंदूर
हार
चूड़ियाँ
काजल
मेहँदी
अंगूठी
कंगन
गजरा
माँग टीका
कमरबंद
पायल
नथ
झुमके
बिछिया
साड़ी ड्रेपिंग